

गार में थे। आज के समय में आनेबद्धगान के अतगत आलाप गायन का प्रचार है जो राग के ख्याल गाने के पहले गाया बजाया जाता है।

थाट

मेल कहिये या थाट :- स्वरों की यह एक विशेष रचना होती है, जिससे राग

की सीढ़ी तैयार होती है। थाट के संबंधों में नीचे लिखी वातें ध्यान रखने योग्य हैं।

1. थाट में हमेशा सातों स्वर होते हैं। चाहे वे किसी भी रूप में हों।

2. थाट में रंजकता होनी आवश्यक होती है।

3. थाट के लक्षण बताने के लिए अवरोह की कोई आशयकता नहीं होती। वैसे तो 72 थाट हो सकते हैं। परंतु आजकल व्यवहार में 10 थाट ही प्राप्ति

लिये हैं जो इस प्रकार हैं:-

- | | |
|---------------|---------------|
| 1. कल्याण थाट | 2. विलावल थाट |
| 3. खमाज थाट | 4. भैरव थाट |
| 5. पूर्वी थाट | 6. मारवा थाट |
| 7. काफी थाट | 8. आसवरी थाट |
| 9. भैरवी थाट | 10. तोड़ी थाट |

संगीत



बोलचाल की भाषा में संगीत से केवल गायन समझा जाता है, किन्तु संगीत में गायन, वादन और नृत्य तीनों के समूह को संगीत कहते हैं। इस प्रकार के मुख्य तीन अंग हुये—गायन, वादन और नृत्य। पं. शारद्देव लिखित रूपाकार में कहा गया है, 'गीतं, वाद्यं तथा नृत्यं, त्रयं संगीत मुच्यते' अर्थात् गजाना और नृत्य इन तीनों का सम्मिलित रूप संगीत कहलाता है। पश्चिमी संगीत से केवल गायन और वादन समझा जाता है। यहाँ नृत्य को समझा रखा गया है।

सुना सकेंगे, पर दाना स्थाना पर वास्तव में नाद एक ही है।

(2) नाद की जाति या गुण :- नाद की जाति से हम वही आसानी से पहचान सकते हैं कि वह किस मनुष्य या किस वायु का है। सब वायों में एक नाद है, फिर भी हम नाद की जाति से ही वायु को बिना देखे हुए बता सकते हैं कि वह कौन से वायु का है।

(3) नाद की ऊँचाई और नीचाई :- नाद की ऊँचाई का संबंध उसके हर सेकिण्ड में होने वाले आंदोलन के साथ रहता है। ये आंदोलन जितने अधिक होंगे उतना ही अधिक ऊँचा नाद और जितने ही कम होंगे उतना ही नीचा नाद रहेगा। नाद के छोटा या बड़े होने का संबंध आंदोलन की संख्या से नहीं रहता। एक ही नाद छोटा या बड़ा हो सकता है पर वह ऊँचा या नीचा नहीं हो सकता।

स्वर

जिस ध्वनि में लगातार भनक हो उसको 'स्वर' कहते हैं। पर यदि वह ध्वनि किसी ऊँचाई पर पहुंच कर वहां बराबर स्थिर रहे, नीचे ऊपर न खिसके तो उसको संगीत

का स्वर कहते हैं। संगीत के स्वर निश्चित है, क्योंकि वे अपने स्थान पर संगीत के स्वर कहते हैं। और सुनने में मधुर मालूम होते हैं।
एक से बोलते रहते हैं और सुनने में मधुर मालूम होते हैं।
मुख्य स्वर सात है जिनके नाम इस प्रकार हैं :-

(1) षड्ज (2) ग्राहण (3) गंधार (4) मध्यम (5) पंचम (6) धृवत और

(7) निषाद
इनकों संक्षेप में सा रे ग म प ध नी कहते हैं।

शुद्ध स्वर

जब उपर्युक्त सात स्वर, अपने निश्चित स्थान पर रहते हैं। जब 'शुद्ध स्वर' कहलाते हैं। परंतु इन स्वरों में से 'रे ग म ध नी' स्वर अपने शुद्ध रूपों के अतिरिक्त अपने विकृत रूपों में भी आते हैं। अर्थात् ये स्वर अपने स्थान से कभी कभी ऊपर या नीचे हो जाते हैं। इसलिए इनके दोनों रूप होते हैं। संगीत के सात स्वरों में केवल स और प कभी अपने स्थान पर नीचे ऊपर नहीं होते, इसलिए ये अचल स्वर कहलाते हैं।

विकृत स्वर

जब 'रे ग म ध नी' स्वर अपने स्थान से ऊपर या नीचे की ओर हटते हैं तब उन्हें 'विकृत स्वर' कहते हैं। सात स्वरों में केवल षड्ज और पंचम को छोड़कर शेष पांच स्वर विकृत हैं। विकृत स्वरों को हम भागों में बांट सकते हैं:-

(1) कोमल विकृत (2) तीव्र विकृत

कोमल विकृत तब होता है जब कि स्वर अपने स्थान से नीचे की ओर हटता है, जैसे 'रे ग ध नी' स्वर जब नीचे की ओर हटते हैं तब वे कोमल स्वर कहलाते हैं। जब स्वर अपने स्थान से ऊपर की ओर हटता है तब वह तीव्र स्वर कहलाता है। केवल मध्यम ही अपने स्थान से ऊँचा जाता है तब उसे तीव्र मध्यम कह कर पुकार जाता है।

राग



यह ध्वनि की एक विशेष रचना है, जिसे स्वर और वर्ण से सुन्दरता प्राप्त होती है जो चित्त को आनन्द देती है। राग थाट से उत्पन्न होता है और एक ही थाट से सैकड़ों राग निकल सकते हैं। वैसे 6 राग तथा 30 रागियां मानी जाती हैं।

6 राग 30 रागियाँ

पहला राग :- श्री

रागिनियाँ :- मारू, बसंत, धनाश्री, अप्सावरी, मालश्री
दूसरा राग :- दीपक

रागिनियाँ :- कान्हररा, केदार, नट, देसी कामोदी
तीसरा राग :- मेघ

रागिनियाँ :- देशकार, भूपाली, गुर्जरी, टंक, मल्हार
चौथा राग :- हिंडोल

रागिनियाँ :- पटमंजरी, बिलावल, ललित, रामकली, देशाक्षी
पांचवा राग :- भैरव

रागिनियाँ :- बंगाली, सेंधवी, मधुमाधवी, वैराटी, भैरवी
छठा राग :- मालकोश

रागिनियाँ :- गुणकली, कुकुभ, गौरी, तोड़ी, खम्भावती

श्रुति

सप्तक के बारह स्वरों के बीच-बीच में और भी बहुत सी ध्वनियाँ हैं जिन्हें 'श्रुति' कहते हैं। श्रुतियों का दर्शन केवल सारंगी, सितार, वीणा, इत्यादि तार वाद्यों में ही संभव है। भारतीय प्राचीन संगीत में बाईस श्रुतियाँ एक सप्तक में मानी जाती हैं। कुशल गायक गले से भी इन श्रुतियों की आवाज निकाल सकता है।

निबद्धगान और अनिबद्धगान

निबद्धगान:- ताल में बद्ध जो गायन हो यानी ताल में बंधी रचनाओं को 'निबद्धगान' कहते हैं। प्राचीन काल में प्रबंध, रूपक, वस्तु इत्यादि गाये जाते थे, ये सब निबद्धगान के ही अंतर्गत माने जाते थे। पर आज के जमाने में ख्याल, ठुमरी, दादरा, ध्रुपद आदि को ही निबद्धगान मान लिया है। इन सब को ताल के साथ ताल में बांध कर ही गाया बजाया जाता है। तभी इसे निबद्धगान कहा जा सकता है।

— जो गायन बिना ताल के गाया बजाया जाये, वह 'अनिबद्धगान' जगालाप, आलिप्तागान आदि

1.

शास्त्र परिचय

वर्ण

गानक्रियोच्यते वर्णः स चतुर्धा निरूपितः।
स्थायारोह्यवरोही च सचारीत्यथ लक्षणम्॥

—अभिनव रागमंजरी

अर्थात्—गाने की जो क्रिया है, उसे 'वर्ण' कहते हैं। वर्ण चार प्रकार के होते हैं, जिन्हें क्रमशः 1. स्थायी, 2. आरोही, 3. अवरोही और 4. संचारी वर्ण कहते हैं।

स्थायी वर्ण : एक ही स्वर बार-बार ठहर-ठहरकर बोलने या गाने की क्रिया को स्थायी वर्ण कहते हैं; जैसे—सा सा सा सा, रे रे रे रे अथवा ग ग ग ग। स्थायी का अर्थ है—‘ठहरा हुआ’।

आरोही वर्ण : नीचे स्वर से ऊँचे तक चढ़ने या गाने की क्रिया को आरोही वर्ण कहते हैं; जैसे—षड्ज से आगे स्वर बोलने हैं तो ‘सा रे ग म प ध नि’, यह आरोही वर्ण हुआ।

अवरोही वर्ण : ऊँचे स्वर से नीचे स्वरों पर आने या गाने की क्रिया को अवरोही वर्ण कहते हैं; जैसे—षड्ज स्वर से नीचे के स्वर बोलने हैं, तो ‘सां नि ध प म ग रे सा’, वह अवरोही वर्ण हुआ।

संचारी वर्ण : स्थायी, आरोही और अवरोही—इन तीन वर्णों के संयोग (मिलावट) से जब स्वरों की उलट-पलट की जाती है, अर्थात् जब तीनों वर्ण मिलकर अपना रूप दिखाते हैं, तब इस क्रिया को संचारी वर्ण कहते हैं।

ज्ञातव्य : गाते-बजाते समय उपर्युक्त चारों वर्ण काम में लाए जाते हैं। किसी भी गायन में उपर्युक्त चारों वर्ण अवश्य ही मिलेंगे, क्योंकि

इनके बिना गान-क्रिया चल नहीं सकती।

अलंकार

प्राचीन ग्रंथकार 'अलंकार' की परिभाषा इस प्रकार करते हैं:-

विशिष्ट वर्णसंदर्भमलंकार प्रचक्षते

अर्थात्—कुछ नियमित वर्ण-समुदायों को 'अलंकार' कहते हैं।

'अलंकार' का अर्थ है 'आभूषण' या 'गहना'। जिस प्रकार आभूषण शारीरिक शोभा बढ़ाते हैं, उसी प्रकार अलंकारों के द्वारा गायन की शोभा बढ़ जाती है। 'अभिनव रागमंजरी' में लिखा है:-

शशिना रहितेव निशा विजलेव नदी लता विपुष्येव।

अविभूषिते कांता गीतिरलंकारहीना स्यात् ॥

अर्थात्—जैसे चन्द्रमा के बिना रात्रि, जल के बिना नदी, फूलों के बिना लता तथा आभूषणों के बिना स्त्री शोभा नहीं पाती, उसी प्रकार अलंकार-बिना गीत भी शोभा को प्राप्त नहीं होते।

अलंकार को 'पलटा' भी कहते हैं। गायन सीखने से पहले विद्यार्थियों को अलंकार सिखाए जाते हैं, क्योंकि इसके बिना न तो अच्छा स्वर-ज्ञान ही होता है और न उन्हें आगे संगीत-कला में सफलता ही मिलती है। अलंकारों से राग-विस्तार में भी काफी सहायता मिलती है। अलंकारों के द्वारा राग की सजावट करके उसमें चार चाँद लगाए जा सकते हैं। तानें इत्यादि भी अलंकारों के आधार पर ही बनती हैं, जैसे 'सारे गरे गम ग म पड़। रेग रे ग मप धड़' इत्यादि।

अलंकार वर्ण-समुदायों में ही होते हैं। उदाहरण के लिए वर्ण-समुदाय को लीजिए 'सा रे गा सा'। इसमें आरोही-अवरोही, दोनों वर्ण आ गए हैं। यह एक सीढ़ी मान लीजिए। अब इसी आधार पर आगे बढ़िए और पिछला स्वर छोड़कर आगे का स्वर बढ़ाते जाइए; रे ग म रे यह दूसरी सीढ़ी हुई; ग म प ग यह तीसरी सीढ़ी हुई। इसी प्रकार बहुत-से अलंकार तैयार किए जा सकते हैं। शुद्ध स्वरों के अलावा कोमल-तीव्र स्वरों के

अलंकार भी तैयार किए जा सकते हैं, किन्तु उनमें यह ध्यान रखना आवश्यक होता है कि जिस राग में जो स्वर लगते हैं, वे ही स्वर उस राग के अलंकारों में मिल जाएँ।

ग्राम

ग्राम शब्द समूहवाची है। जिस प्रकार कुटुम्ब में लोग मिल-जुलकर मर्यादा की रक्षा करते हुए इकट्ठे रहते हैं, उसी प्रकार वादी-सम्बादी स्वरों का वह समूह जिसमें श्रुतियाँ व्यवस्थित रूप में विद्यमान हों और जो मूर्छ्छना, तान आदि का आश्रय हो, उसे ग्राम कहते हैं। यहाँ यह बात स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए कि जब तक स्वरों में श्रुतियाँ व्यवस्थित रूप में रहेंगी तभी तक ग्राम रहेगा। उदाहरण के लिए जब आप स्वरों में 4, 3, 2, 4, 4, 3, 2 का क्रम रखेंगे तो विद्वान् इसे षड्ज ग्राम कहते हैं। अब यदि इनमें से किसी भी एक स्वर की श्रुतियों को बदल दिया जाएगा तो ग्राम भी तुरन्त बदल जाएगा। उदाहरण के लिए यदि षड्ज ग्राम के स्वरों में पंचम की चार श्रुतियों के स्थान पर तीन कर दें तो धेवत की चार हो जायेंगी, अर्थात् इनका क्रम 4, 3, 2, 4, 4, 3, 2 के स्थान पर 4, 3, 2, 4, 3, 4, 2 कर दें तो अब श्रुतियों के क्रम में अन्तर हो जाने के कारण यह दूसरा ग्राम बन गया। इसे षड्ज ग्राम न कहकर मध्यम ग्राम कहते हैं। दूसरे शब्दों में आप इसे यूँ भी कह सकते हैं कि षड्ज ग्राम का पंचम चार श्रुतियों का है, जबकि मध्यम ग्राम का पंचम तीन श्रुतियों का होता है। (ध्यान रखिए कि शेष स्वरों की स्थिति में कोई अन्तर नहीं होता। जब केवल एक स्वर पंचम को एक श्रुति गिराकर लोगों को गायन-वादन करना इतना कठिन प्रतीत होता है कि साधारण रूप से लोग यह समझने लगे हैं कि मध्यम ग्राम का प्रचार अब नहीं है, तब इसके स्थान पर यदि षड्ज व पंचम को छोड़कर शेष समस्त स्वरों के स्थान बदल जायें तो उस ग्राम का गायन-वादन कितना कठिन होगा? यही स्थिति गन्धार ग्राम की है। इसीलिए इसके विषय में यह कहा जाता है कि गन्धार ग्राम स्वर्ग लोक को गया।

की और पंचम को आरंभिक स्वर मानकर सातों स्वरों को क्रमयुक्त रखने पर पंचम की मूर्च्छतायें होंगी। अन्य स्वरों की भी मूर्च्छनायें इसी प्रकार समझनी चाहिए। चूंकि स्वरों की संख्या सात होती है अतएव षड्ज ग्राम में इन शुद्ध स्वरों की सात मूर्च्छनायें बनेंगी, अब इसी प्रकार मध्यम ग्राम में भी सात मूर्च्छनायें समझनी चाहिए। इस आधार से दोनों ग्रामों से कुल मूर्च्छनायें चौदह होती हैं।

ग्रामों से ही मूर्च्छना की उत्पत्ति होती है। इसी एक ग्राम के सात स्वरों को बारी-बारी से प्रत्येक को षड्ज मान मर आरोह अवरोह करने से अलग-अलग मूर्च्छनायें बनेंगी। प्राचीन काल में तीन ग्राम माने जाते थे और प्रत्येक ग्राम की सात-सात मूर्च्छनायें बनती थीं, आज जो स्थान थाट का है, वही प्राचीन काल में मूर्च्छना का था।

गमक

आंदोलन के द्वारा जब स्वरों में कंपन पैदा होता है, तो उसका गंभीरतापूर्वक उच्चारण करना ही 'गमक' कहलाता है जैसे स अ अ अ रे ए ए ग अ अ अ इत्यादि।

आजकल गमक शब्द का प्रयोग उन स्वरों के लिये किया जाता है, जिन पर अधिक आन्दोलन होता है तथा जिनको गायक हृदय से निकालता है। विशेष रूप से स्वरों के हिलाने को 'गमक' कहते हैं। संगीत के प्राचीन ग्रन्थकार गमक के पन्द्रह प्रकार मानते हैं, जिनमें से कुछ का प्रयोग आधुनिक समय में भी होता है।

मुर्की

दो या तीन स्वरों को बहुत तेजी या झटके के साथ लेकर आखिरी स्वर को छूकर वहीं पर समाप्त कर देने को मुर्की कहते हैं। इसका अधिक उपयोग टप्पा-गायन में होता है।

कण

किसी स्वर का उच्चारण करते समय उसके आगे या पीछे के किसी स्वर को कुछ छूने या उसका स्पर्श करने को 'कण' कहते हैं; जैसे

के बराबर किया जाता है। इसे गान का लय गला काफी तैयार होना चाहिए। इसमें खटका, मुक्की, कण आदि का प्रयोग प्रचुरता से होता है। टप्पे का प्रयोग पंजाब में अधिक है। कहा जाता है मुहम्मद शाह के समय में गुलाम नवी शोरी ने गीत के इस प्रकार का आविष्कार पंजाब के एक लोकगीत के आधार पर किया था। टप्पा सितारखानी, फिरदोस्त आदि तालों में गाया जाता है।

लक्षण गीत

जिस गीत में अपने राग का पूरा लक्षण हो, लक्षण गीत कहलाता है। इसका उद्देश्य यह है कि प्रारम्भिक विद्यार्थियों को गीत के सहारे राग का परिचय कण्ठस्थ हो जाय। लक्षण गीत में भी ख्याल की तरह होती है। यह अधिकतर उन्हीं तालों में होते हैं जिनके छोटे ख्याल गाये जाते हैं। कभी-कभी ध्रुपद अंग के भी कुछ लक्षण गीत पाये जाते हैं। अतः यह किसी भी ताल में हो सकता है। तीन ताल में निबद्ध अल्हैया विलावल का एक लक्षण गीत-नीचे देखिये—

स्थाई— कहत बिलावल भेद अल्हैया।

प्रात समय गुनि गावत जेहि को,
ध-ग सम्वाद करैया।

अन्तरा— आरोहन मध्यम तजि दैया,
संग धैवत मूदु नि बिचरैया,
ग प ध नि सां नि ध प ध नि
ध प म ग रे सुर लेवैया॥

स्वरमालिका

राग में प्रयोग किये जाने वाले स्वरों की तालबद्ध रचना स्वरमालिका कहलाती है। यह प्रत्येक राग में और लगभग प्रत्येक ताल में हो सकती है। यह मध्य ताल में होती है। इसके भी केवल दो भाग होते हैं, स्थाई और अन्तरा। इसका मुख्य

- (७) सम्पूर्ण-सम्पूर्ण-आरोह-अवरोह दोनों में ७-७ स्वर।
 (८) सम्पूर्ण-बाडव-आरोह में ७ और अवरोह में ६ स्वर।
 (९) सम्पूर्ण-औडव-आरोह में ७ और अवरोह में ५ स्वर।

वर्ज्य—जिन स्वरों का प्रयोग किसी राग में नहीं होता है वे उस राग के वर्ज्य स्वर कहलाते हैं। उदाहरण के लिये आसावरी के आरोह में ग स्वर वर्ज्य है। म और नि स्वर भूपाली के आरोह और अवरोह दोनों में प्रयोग नहीं किये जाते। इसलिये यह कहा जाता है कि भूपाली में म और नि स्वर वर्ज्य हैं।

वर्ज्य और विवादी—इनमें अन्तर यह है कि वर्ज्य स्वर का प्रयोग कभी नहीं होता, किन्तु विवादी स्वर का प्रयोग राग की रंजकता बढ़ाने के लिए कभी-कभी कर लिया जाता है।

वादी, सम्वादी और अनुवादी—राग में प्रयोग किये जाने वाले स्वरों की तीन श्रेणियाँ हैं—वादी, सम्वादी और अनुवादी। राग का सबसे महत्वपूर्ण स्वर वादी कहलाता है अर्थात् राग के अन्य स्वरों की अपेक्षा जिस स्वर पर अधिक ठहरा जाता है तथा जिसका प्रयोग बार-बार किया जाता है वह उस राग का वादी स्वर कहलाता है। उदाहरणार्थ भूपाली राग को लीजिये। इसमें ग स्वर को वादी माना गया है। भूपाली राग का आलाप पृष्ठ ४८ पर देखिए कि उसमें ग को कितना महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। वादी स्वर को राग रूपी राज्य का राजा कहा गया है। वादी स्वर को अंश स्वर, जीव स्वर अथवा प्रधान स्वर भी कहते हैं। राग में वादी स्वर का इतना अधिक महत्व होता है कि दो रागों में स्वरों की हैं। राग में वादी स्वर के परिवर्तन से दोनों राग एक दूसरे से समानता होते हुये भी केवल वादी स्वर के परिवर्तन से दोनों राग एक दूसरे से बिल्कुल अलग हो जाते हैं। उदाहरणार्थ भूपाली और देशकार रागों को लीजिए। बिल्कुल अलग हो जाते हैं। वादी स्वर के परिवर्तन से दोनों राग एक दूसरे से बिल्कुल अलग हो जाते हैं। भूपाली राग में ग वादी और ध सम्वादी है तो देशकार राग में ध वादी और ग सम्वादी है।

वादी स्वर से लाभ—वादी स्वर के द्वारा राग के गाने का साधारण समय भी ज्ञात होता है। राग का यह नियम है कि अगर किसी राग का वादी स्वर भी ज्ञात होता है। राग का यह नियम है कि अगर किसी राग का वादी स्वर सप्तक के पूर्वांग (सा, रे, ग, म और प) में से कोई स्वर है तो उसका गायन-समय दिन के पूर्व अंग में (१२ बजे दिन के बाद से १२ बजे रात तक) किसी समय दिन के पूर्व अंग में (१२ बजे दिन के बाद से १२ बजे रात तक) किसी

समय होगा। इसके विपरीत जिस किसी राग का वादी स्वर सप्तक के उत्तरांग में से कोई एक स्वर है तो उसका गायन-समय दिन व रात्रि के बाद से वारह बजे दिन तक) किसी समय होगा। उत्तरांग में (वारह बजे रात्रि के बाद से वारह बजे दिन तक) किसी समय होगा। उदाहरणार्थ भैरव राग में ध व रे वादी-सम्वादी हैं। इसलिये हम विना कोई समझे यह कह सकते हैं कि भैरव का गायन-समय १२ बजे रात्रि के बाद से ऊपर यह शंका उठती है कि किस प्रकार म और प दोनों स्वर पूर्वांग और उत्तरांग दोनों में माने गये। इस शंका का समाधान हम आगे करेंगे। यहाँ पर केवल इतना ही जान लेना पर्याप्त होगा कि सप्तक के पूर्वांग में सा से प तक तथा उत्तरांग में म से सां तक के स्वर आते हैं।

सम्वादी—राग का द्वितीय महत्वपूर्ण स्वर सम्वादी कहलाता है। इसका प्रयोग तथा न्यास, वादी की अपेक्षा कम तथा अन्य स्वरों की तुलना में अधिक होता है। इसे वादी रूपी राजा का मन्त्री कहा गया है, क्योंकि यह वादी स्वर का परम सहायक होता है और उससे अटूट सम्बन्ध स्थापित किये रहता है। वादी और सम्वादी स्वरों में चार अथवा पाँच स्वरों की दूरी रहती है। दूसरे शब्दों में वादी-सम्वादी में षड्ज-मध्यम अथवा षड्ज-पंचम भाव अवश्य रहता है। इसका तात्पर्य यह है कि वादी-सम्वादी में अगर किसी को षड्ज मान लिया जाय तो दूसरा स्वर या तो उसका मध्यम और या पंचम होगा। एक या दो उदाहरण से यह नियम और भी स्पष्ट हो जायेगा। वृन्दावनी सारंग में रे प वादी-सम्वादी हैं। इसमें अगर रिषभ को सा मान लिया जाय, तो पंचम उसका मध्यम होगा। इसी तरह कल्याण में ग नी वादी-सम्वादी हैं। अगर ग को षड्ज मान लिया जाय तो नि उसका पंचम होगा। सप्तक में सा म, रे प, ग ध, म नी और प सां स्वरों के बीच षड्ज-मध्यम भाव तथा सा प, रे ध, ग नी और म सां स्वरों में षड्ज-पंचम भाव रहता है।

अनुवादी—वादी-सम्वादी के अतिरिक्त राग में प्रयोग किये जाने वाले अन्य स्वर अनुवादी कहलाते हैं। उदाहरण के लिये भैरवी राग में म-सा के अतिरिक्त जो क्रमशः वादी-सम्वादी हैं, राग के शेष स्वर अनुवादी कहलाते हैं। अनुवादी स्वरों को अनुचर की उपमा दी गई है।

विवादी- उस स्वर को विवादी स्वर कहा गया है, जिससे राग का स्वरूप बिगड़े। उदाहरणार्थ वृन्दावनी सारंग में सा, रे, म, प और दोनों भी को छोड़कर अल्प सभी स्वर (शुद्ध अथवा विकृत) उस राग के विवादी स्वर हैं। एक राग का विवादी स्वर दूसरे राग का वादी, सम्वादी अथवा अनुवादी हो सकता है। राग वृन्दावनी सारंग के लिये कोमल धैवत विवादी स्वर है, किन्तु यही स्वर राग भैरव और राग भियाँ की तोड़ी में वादी है। विवादी स्वर को राग का शत्रु कहा गया है। कभी-कभी राग की सुन्दरता बढ़ाने के लिये विवादी स्वर का क्षणिक प्रयोग भी कर लिया जाता है। ऐसा करते समय बड़ी सावधानी की आवश्यकता होती है। अन्यथा राग के बिगड़ने की आशंका रहती है। विवादी स्वर को प्रयोग करते समय मुख्य दो बातों का ध्यान रखना आवश्यक है—

(१) **मधुरता-** विवादी का प्रयोग उस समय करना चाहिए जब कि राग की रजकता बढ़े। केवल प्रयोग के लिए प्रयोग न करना चाहिये अन्यथा राग-हानि होगी। बिहाग में तीव्र म, छायानट, कामोद, हमीर तथा केदार रागों में कोमल निषाद विवादी स्वर है। विवादी स्वर को प्रयोग करने से राग-हानि नहीं होती बल्कि उसके गलत प्रयोग से राग-हानि अवश्य होती है। आजकल कुछ रागों में विवादी स्वर धीरे-धीरे अनुवादी का स्थान ग्रहण कर रहे हैं, उदाहरणार्थ बिहाग राग में तीव्र मध्यम का प्रयोग इतना अधिक बढ़ गया है कि प मं ग म ग, रे सा, के सुनते ही श्रोतागण बिहाग कह बैठते हैं।

(२) **अल्प प्रयोग-** विवादी स्वर का अल्प प्रयोग होना चाहिये। ऐसा न करने से विवादी स्वर अनुवादी बन जायेगा।

पूर्वांग और उत्तरांग- सप्तक को दो बराबर भागों में विभाजित करने के लिये तार सा जोड़ दिया और सप्तक को सा रे ग म व प ध नि सां इन दो हिस्सों में बांट दिया। प्रथम भाग सा रे ग म को पूर्वांग और दूसरे भाग प ध नि सां को उत्तरांग कहा गया। विशेष कठिनाइयों के कारण जिन पर हम आगे विचार करेंगे, सप्तक का पूर्वांग सा से प तक और उत्तरांग म से तार सा तक बढ़ा दिया गया। जिस प्रकार सप्तक के दो हिस्से किये गये, उसी प्रकार २४ घण्टे के समय को भी दो बराबर भागों में बाँटा गया। प्रथम भाग १२ बजे दिन से १२ बजे रात्रि तक व दूसरा भाग १२ बजे रात्रि से १२ बजे दिन तक रखा। अब दोनों भाग को पूर्वार्ध और दूसरे भाग को उत्तरार्ध कहा गया।